International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 4; July 2018; Page No. 13-16

रूद्र शिव की वैदिक अवधारणा–पाशुपत सम्प्रदाय के प्रवर्तक एवं आचार्य

डॉ0 सत्येन्द्र कुमार मिश्र
सहायक प्राध्यापक, एमिटी युनिवर्सिटी, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश
पाशुपत–सम्प्रदाय की उत्पत्ति छठीं–पॉचवीं शताब्दी ई. पू. में हुई होगी। परन्तु इससे यह अभिप्राय नहीं निकालना चाहिए कि पाशुपत सम्प्रदाय का उद्भव छठवीं–पॉचवी शताब्दी ई. पू. कि कोई आकस्मिक घटना मात्र है, क्योंकि किसी भी धार्मिक संस्था अथवा विचारधारा का उद्भव विभिन्न प्रवृत्तियों और परम्पराओं और प्रवृत्तियों और परम्पराओं के पारस्परिक आदान–प्रदान एवं संघात के फलस्वरूप होता है, जो कि शताब्दियों से उस मत विशेष में होती रहती है। भारतीय धर्मसाधना और प्रवृत्तियों को निरन्तर सम्मिश्रण होता रहा है। अतः हम किसी भी धार्मिक संस्था अथवा सिद्धान्त को सर्वथा एकोन्मुख नही मान सकते है।
पाशुपत सम्प्रदाय के उद्भव का इतिहास अत्यधिक रोचक है, क्योंकि इसमें भारत की आर्य और अनार्य, वैदिक और अवैदिक, सभ्य और असभ्य, विकसित और अविकसित सभी परम्पराओं के तत्वों का समावेश हुआ है। पाशुपत मत शैव धार्मिक व्यवस्था का प्रथम साम्प्रदायिक उपज है, अतः शैव धर्म की उत्पत्ति की पृष्ठभूमि में ही पाशुपत सम्प्रदाय के निर्माणत्मक तत्वों का विश्लेषण उचित प्रतीत होता है।
भारत की सन्दर्भ में यह धारणा और भी अधिक समीचीन लगती है क्योंकि यहीं की धार्मिक विचारधारा उदार एवं सविष्णु आधारों पर विकसित हुई थी और इस उदारवादी प्रवृत्ति के कारण सभी धर्मो एवं विचारधाराओं में विभिन्न परम्पराओं और तत्वों को सम्मिश्रण हुआ।

मूल शब्दः धर्मसाधना, पाशुपत–सम्प्रदाय

प्रस्तावना
पाशुपत–सम्प्रदाय की प्राचीनता एवं उत्पत्ति के समान ही इसके संस्थापक एवं प्रवर्तक का प्रश्न भी मतभेद एवं विवादग्रस्त रहा है। पाशुपत–धर्म की इस महत्वपूर्ण समस्या को इतिहासविदों ने विभिन्न ढंग से सुलझाने का प्रयास किया है, जिनका विहंगमावलोकन, गवेशणा के दृष्टिकोण से औचित्ययुक्त ही नहीं, अपितु अनिवार्य है। अधिकांश विद्वान[1] पाशुपत मत को लकुलीश नामक एक ऐतिहासिक व्यक्ति द्वारा प्रादुर्भूत मानते हैं एवं इसी आधार पर इतिहासकारों के एक विशिष्ट समुदाय में पाशुपत–सम्प्रदाय को लकुलीश–पाशुपत अथवा नकुलीश पाशुपत[2] की संज्ञा से अलंकृत किया गया है, किन्तु इस सिद्धान्त के विरोधी विद्वानों का एक अन्य वर्ग है जो लकुलीश को मात्र व्यवस्थापक एवं सुधारक के रूप में अंगीकार करता है। इस विचारधारा के प्रतिपादकों का मतह ै कि पाशुपत–सम्प्रदाय की संस्थापना लकुलीश से पूर्व हो चुकी थी[3] तथा श्रीकण्ठ नामक एक ऐतिहासिक व्यक्ति के द्वारा पाशुपत–मत की आधारशिला रखी जा चुकी थी।[4] इस समस्या का समाधान इन्ही दो विचारों तक ही सीमित नही है, क्योंकि कतिपय विद्वानों ने इस धार्मिक व्यवस्था की उद्भावना श्वेताचार्य अथवा श्वेताश्वेतर नामक व्यक्ति से सिद्ध करने का प्रयास किया है।[5] एक शताब्दी से अधिक व्यतीत हो चुका है,जब से पाशुपत–धर्म के संस्थापक का प्रश्न विचार–विमर्श का विषय बना,यह भी सत्य है कि इन सभी सिद्धान्तो के पक्ष और विपक्ष में अनेकानेक तर्क दिए गए हैं, परन्तु निश्चित रूप से किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सका है। अस्तु पाशुपत–संप्रदाय के प्रवर्तक का प्रश्न एक जटिल समस्या के रूप में आज भी ज्वलन्त बना हुआ है तथा विभिन्न अनुशीलनों, विश्लेषणों एवं अनुसंधानों के उपरान्त भी यह विषय एक रोचक प्रहेलिका के रूप में विद्यमान है।[6]

पाशुपत–सम्प्रदाय के उद्भव में श्रीकण्ठ का योगदान
सर्वप्रथम महाभारत में पाशुपत सम्प्रदाय के प्रवर्तक के रूप में श्रीकण्ठ को मान्यता प्रदान की गई है–

उमापतिभूतपतिः श्रीकण्ठोब्रहाणः सुतः।
उक्तवानिदम व्यग्रो ज्ञान पाशुपतं शिवः।[7]

रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर ने सर्वप्रथम यह परामर्श दिया कि महाभारत में वर्णित श्रीकण्ठ को हम पाशुपत–सम्प्रदाय का संस्थापक मान सकते हैं।[8] विश्वम्भर शरण पाठक ने इस परामर्श को ऐतिहासिक सत्य के रूप में अंगीकृत कर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया कि श्रीकण्ठ एक ऐतिहासिक व्यक्ति थे, जिन्होंने पाशुपत–मत की सृष्टि की।[9] इस सिद्धान्त का लोरेन्जन तथा अन्य विद्वानों ने कटु आलोचना की है।[10] अस्तु पाशुपत–सम्प्रदाय में श्रीकण्ठ की स्थिति की विवेचना स्पृहणीय है।

श्रीकण्ठ की अनैतिहासिकता के पक्ष में तर्क
महाभारत के उपर्युक्त विवरण में श्रीकण्ठ को उमापति, भूतपति, ब्रहापुत्र एवं साक्षात् शिव की संज्ञा से संगुम्फिता किया गया है। इस आधार पर अनेक इतिहासकार श्रीकण्ठ को अनैतिहासिक एवं कल्पित मानते हैं। श्रीकण्ठ के पौराणिक स्वरूप के पक्ष में यह भी समरणीय है कि किसी भी पुरातात्विक साक्ष्य में इन्हें पाशुपत–सम्प्रदाय का संस्थापक नहीं कहा गया है। जैसे लकुलीश के लिए अभिलेखीय साक्ष्य उपलब्ध है।[11] यह भी तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि महाभारत में श्रीकण्ठ का जो विवरण दिया गया है वह एक पौराणिक एवं कल्पनालोक के व्यक्ति के लिए समीचील है, क्योकि किसी भी ऐतिहासिक व्यक्ति चाहे वह पाशुपत–सम्प्रदाय का कितना भी महान पक्षपाती क्यों न हो, उमापति कहना उपयुक्त नहीं है (चाहे हम उसे शिव का अवतार ही क्यों न स्वीकार करें) उमापति की उपाधि उसे देना सामाजिक चेतना और नैतिक सिद्धान्तों के सर्वथा विपरीत है। यह भी द्रष्टव्य है कि श्रीकण्ठ शिव

का नाम था, यहाँ तक कि 12वीं शताब्दी ई. के नीति मयूख नामक ग्रथ के एक लेखक ने श्रीकण्ठ चरित नामक एक ग्रन्थ की रचना की, जिसमें शिवचरित्र वर्णित है।[12] तथा श्रीकण्ठ शिव का व्यक्तिवाचक नाम है। यह भी ध्यातव्य है कि मथुरा अभिलेख[13] में जहाँ लकुलीश एवं अन्य शैवाचार्यो का उल्लेख किया गया है, वहाँ श्रीकण्ठ का कोई वर्णन उपलब्ध नहीं है। यह भी उल्लेखनीय है कि रूपमण्डन [14] में द्वादश रुद्रों में श्रीकण्ठ को भी स्वीकार किया गया है, जो उनके देवी रूप का उद्‌बोधक है। इन सम्पूर्ण आधारों पर श्रीकण्ठ का कल्पित स्वरूप और उसकी अनैतिहासिकता का सिद्धान्त प्रतिपादित किया जा सकता है।

श्रीकण्ठ की ऐतिहासिकता के पक्ष में तर्क

श्रीकण्ठ की ऐतिहासिकता के संदर्भ में विद्वानों ने कतिपय तर्क शेरों का संधान किया है, जिनका विवरण वांछनीय है। प्रथमतः श्रीकण्ठ की ऐतिहासिकता के विषय में कहा जा सकता है। कि इसे महाभारत के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों में भी पाशुपत–सम्प्रदाय के प्रवर्तक का अभिधान प्रदान किया गया है।[15] शैव धर्मान्तर्गत अनेक शाखाओं में इसे पाशुपत–सम्प्रदाय के संस्थापक का संबोधन प्राप्त हुआ है।[16] इसके अतिरिक्त देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित परम्पराओं में भी इन्हें पाशुपत–सम्प्रदाय से सम्बन्धित माना गया है।[17] यह भी तथ्य विचारणीय है कि कालामुखों के शक्ति–परिषद् के आचार्यों में श्रीकण्ठ का नाम दो बार आता है। जो इस तथ्य का द्योतक है कि श्रीकण्ठ ऐतिहासिक व्यक्तियों का नाम होता था।[18] श्रीकण्ठ नामक एक ऐतिहासिक व्यक्ति ने ब्रह्मसूत्र पर भाश्य का प्रणयन किया एवं वह शैव विचारधारा से संबंधित होता था। जिस प्रकार लकुलीश का नाम इनके आचार्यों की सूची में आया है, उसी भाँति श्रीकण्ठ का भी नामोल्लेख हुआ है। यद्यपि यह सत्य है कि कालामुखों के आचार्यों की सूची में आने वाले श्रीकण्ठ और लकुलेश्वर नाम कालान्तर के हैं।[19] मथुरा अभिलेख में वर्णित लकुलीश से किसी भी प्रकार का सामंजस्य नहीं हो सकता है। ऐसे ही महाभारत में वर्णित श्रीकण्ठ से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं हो सकता है। किन्तु इतना तो सिद्ध होता है कि इस संज्ञा से समन्वित ऐतिहासिक वयक्ति भी होते थे एवं यह तर्क कि शिव का श्रीकण्ठ का अभिधान हुआ करता था, अतः वे दैवी अनैतिहासिक व्यक्ति थें, औचित्य की परिधि के अंदर नहीं प्रतीत होता। तृतीय स्थान में महाभारत के इस परम्परा के पक्ष में डॉ. विश्वम्भर शरण पाठक ने दो अन्य तर्क प्रस्तुत किए हैं।[20] प्रथमतः अनेक साहित्यिक साक्ष्यों में इस परम्परा का विवरण आता है, उदाहरणतः 'तंत्रालोक'[21] में इस परम्परा की पुनरावृत्ति की गई है। 'शिवदृष्टि'[22] नामक ग्रन्थ में भी कहा गया है कि इस सम्प्रदाय का शिव ने श्रीकण्ठ के माध्यम से अवतरित किया। वृहदयामल[23] में भी श्रीकण्ठ के प्रसाद से इसके प्रवर्तित होने का उल्लेख किया गया है। श्रीकण्ठ के द्वारा इसे 'प्रोक्त' भी कहा गया है। शारदा तिलक[24] की एक टीका में श्रीकण्ठ को प्रारम्भ में नमस्कार किया गया है एवं उन्हे इस मत का आदि गुरू कहा गया है तथा अन्य आचार्यों के साथ इसका विवरण दिया गया है। पिंगलामत[25] में भगवान श्रीकण्ठनाथ को कर्ता के रूप में चित्रित किया गया है। शिवपुराण[26] में शिवरूपी श्रीकण्ठ के द्वारा इसे आविर्भूत कहा गया है। 'तंत्रालोक'[27] में तो स्पष्ट रूप से कहा गया है कि श्रीकण्ठ इस पृथ्वी पर एक विलक्षण गुरू है, जो भगवान महेश्वर की दूसरी प्रतिमा है। 'रत्नत्रय'[28] के टीकाकार अघारे शिव द्वारा श्रीकण्ठ गुरू के रूप में मान्य हैं तथा अभिवंदनीय हैं। इस प्रकार श्रीकण्ठ का आदि गुरू विशयक पक्ष भी विभिन्न ग्रन्थों में उपलब्ध होता है।

द्वितीय स्थान में डॉ. विश्वम्भर शरण पाठक[29] ने ध्यान इस ओर भी आकृष्ट किया है कि श्रीकण्ठ को अनेक शास्त्रों और ग्रन्थों का प्रणेता भी कहा गया है। उदाहरणतया तंत्रलोक[30] के अनुसार श्रीकण्ठ ने 'मांगलशास्त्र की रचना की जिसमें उन्होंने शक्ति और शक्तिमान की व्याख्या की है। इसी ग्रन्थ की टीका में जयरथ ने 'इतिश्रीकण्ठनाथोक्ति' का उल्लेख किया है।[31] जयरथ ने ही 'श्रीकण्ठी' नामक एक 'प्रमाणिक आगम' का उल्लेख किया है।[32]

नेपाल दरबार पुस्तकालय में तंत्राचार की एक हस्तलिपि सुरक्षित है, जिसमें श्रीकण्ठनाथ को इस ग्रन्थ का लेखक बताया गया है और इन्हें महान पाशुपत आचार्य भी कहा [33] गया है। वी.सी. वाग्ची [34] ने यह विचार व्यक्त किया है कि इस श्रीकण्ठ का पाशुपत आचार्य श्रीकण्ठ से कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि इसे स्पष्ट रूप से पाशुपताचार्य का संबोधन प्रदान किया गया है तथा ऐसा कोई कारण दृष्टिगत नहीं है कि उसे इस श्रीकण्ठ से सम्बन्धित न बताया जाय डॉ. पाठक [35] इसे परम्परागत श्रीकण्ठ से ही सम्बन्धित मानते हैं।

तृतीय स्थान में यह भी द्रष्टव्य है कि अन्य मानव आचार्यो के समान श्रीकण्ठ को भी देवस्थान की प्राप्ति हुई थी।[36] उदाहरणार्थ इनका समीकरण पंचमुख सदाशिव से स्थापित किया है, क्योकि इन्होंने पंचस्रोतात्मक सिद्धन्त (पंचस्रोतरूपा) का प्रतिपादन किया।[37] पाशुपत–मत को पांचार्थिक पचार्थ लाकुल आम्ताय प्रभृति की संज्ञा इसी कारण प्रदान की गई है। चिन्ता–प्रशस्ति[38] में पंचमुख श्रीकण्ठ के लिए एक मन्दिर का उल्लेख किया गया है। शैव सिद्धान्त शाखा में आठ विद्येश्वरों में से इन्हें एक बताया गया हैं।[39] विश्णुधर्मोतर पुराण[40] में भी इन्हें विद्येश्वर बताया गया है। बिहारी अभिलेख[41] में युवराज द्वितीय को श्रीकण्ठ की उपासना में अनुरक्त बताया गया है। शैव देव मण्डल में यदि श्रीकण्ठ को स्थान प्राप्त हुआ है तो वह उसके ऐतिहासिक स्वरूप के विरोध में नहीं है, क्योंकि प्राचीन भारतीय धर्मेतिहास का यदि हम अध्ययन करें तो इस प्रकार की समानान्तर परम्परायें अन्य धर्मों में भी दृष्टिगोचर होती हैं। उदाहरणतः जैन धर्म में चौबीसं तीर्थकरों को देवमण्डल में स्थान दिया गया था।[42] इनमें पार्श्व और महावीर की ऐतिहासिकता तो निर्विवाद है। बौद्ध परम्परा में भी बुद्ध को देवत्व प्रदान किया गया था,[43] किन्तु उनकी ऐतिहासिकता में कोई ननूनच नहीं कर सकता। वैश्णव सम्प्रदाय के इतिहास में भी दृष्टिगत होता है कि वासुदेव[44] जो सम्भपतः एक ऐतिहासिक व्यक्ति थे तथा नारायण जो सम्भवतः एक ऐतिहासिक ऋषि थे, देवरुप में स्थापित है। पाशुपत सम्प्रदाय में लकुलीश को देवत्व प्रदान किया गया है।[45] लकुलीश [46] की सहसो प्रतिमायें उपलब्ध हुई हैं, लेकिन उसकी ऐतिहासिकता इस आधार पर सन्देह का विशय नहीं बन सकता। संक्षेप में यह तर्क कि श्रीकण्ठ को शैव देवमण्डल में स्थान प्रदान किया गया है, अतएव वह अनैतिहासिक है, ऐतिहासिक न्याय की कसौटी पर खरा नहीं उतरता, क्योंकि भारतीय धर्मों के इतिहास में समानान्तर प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं।

श्रीकण्ठ की ऐतिहासिकता के पक्ष में दो अन्य तर्क प्रस्तुत किए जा सकते हैं। प्रथम स्थान में महाभारतान्तर्गत जिस सन्दर्भ में यह विवरण आया है, वह भी द्रष्टव्य है। इस विवरण का सन्दर्भ है सांख्य योग, पांचरात्र, वेद और पाशुपतों शास्त्रों के आचार्यों का विकरण[47] संख्याशास्त्र व प्रवक्ता कपिल है योगशास्त्र के पुरातन ज्ञाता ब्रह्म जी है। अनन्तजन वेदों के आचार्य है तथा शैवमत पाशुपतों के उपदेशकर्ता हैं। पांचरात्र के रचयिता नारायण है। इस विवरण में ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम भी है; जैसे कपिल अपान्तरतमा। अतएव श्रीकण्ठ को भी यादि हम ऐतिहासिक मानें तो अस्वाभाविक–सा प्रतीत नहीं होता है।

द्वितीय स्थान में यह भी विचारणीय है कि यदि पंचम शताब्दी ई.पू.

के लगभग पाशुपत–सम्प्रदाय का उद्‌भव हो गया था तथा लकुलीश का काल प्रथम शताब्दी ई. से पूर्व का नहीं है तो वह अन्य व्यक्ति कौन हो सकता है, जिसने पंचम शताब्दी ई.पू. में इस सम्प्रदाय का प्रजनन किया होगा? श्रीकण्ठ के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति की सम्भावना अभिव्यक्त नहीं की जा सकती। पी.सी. दीवान[48] ने यह मत प्रकट किया है कि श्रीकण्ठ शिखण्डिन का ही अपर रूप है। पुराणों में शिखण्डिन को रुद्र का 18वाँ अवतार घोषित किया गया है।[49] नाम–साम्य तो अवश्य प्राप्त होता है, किन्तु इसके पक्ष में किसी अन्य सबल साक्ष्य का अभाव है। श्रीकण्ठ को यदि शिव का स्वरूप माना गया है एवं साक्षात शिव के ही रूप में हृदयस्थ किया गया है तो उसमें आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि शैव धर्म के समस्त मतों को शिव द्वारा ही संस्थापित बताया गया है तथा इनके आचार्यो को शिव का अवतार माना गया है।[50] उदाहरण के रूप में लकुलीश वायुपुराण[51] में शिव के अट्‌ठाईसवाँ अवतार के रूप में मान्य हैं। इस प्रकार यदि पाशुपत के आदि प्रवर्तक का तादात्म्य शिव से स्थापित किया गया तो आश्चर्य का विषय नहीं है। ज्ञान की वर्तमान स्थिति में निश्चयात्मक रूप से अन्तिम निर्णय देना तो असभव, है, किन्तु पक्ष और विपक्ष के सभी तर्को के आलोचनात्मक विश्लेषण के पश्चात् यह सम्भावना प्रकट की जा सकती हैं कि श्रीकण्ठ एक ऐतिहासिक व्यक्ति रहा होगा और उसने पाशुपत–सम्प्रदाय के प्रवर्तन में योगदान दिया होगा।

संदर्भ

1. फ्लीट जे., एफ., शिव ऐज लकुलीश, जर्नल ऑफ रायल ऐशियाटिक सोसाईटी (1907), पृ. 419–426, भण्डारकर, डी. आर. लकुलीश । आरक्योलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, एनवल रिपोर्ट, 1906–1907, पृ. 179–192, राव, टी., गणपति एलीमेण्टस ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी, भाग–2, पार्ट–1, पृ 1–23, लोरेजन डविड, एन वही, पृ 177।
2. सर्वदर्शन संग्रह में नकुलीश–पाशुपत–दर्शन संज्ञा से इसे विभूषित किया गया है।
3. बनर्जी, जे.एन., 'लकुलीश : दी फाउण्डर आर द सिस्टेमेटाइजर ऑफ द आर्डर, प्रोसिडिंग्स इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, 14वाँ सत्र जयपुर 1951, पृ. 32–36, ए काम्प्रेहिन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग–2, पृ. 399।
4. पाठक विश्वम्भर शरण हिस्ट्री ऑफ शैव कल्टस इन नादर्न इण्डिया, पृ 4–6। रामकुष्ण गोपाल भण्डारकर ने सर्वप्रथम इस दिशा की ओर संकेत किया था, वही, पृ. 116।
5. दीवान पी.सी लकुलीश ऑफ कारवांण एण्ड हिज पाशुपत कल्चर जर्नल ऑफ दी गुजरात रिसर्च सोसाईटी भाग–17 (1955), पृ 267–274।
6. श्रीवास्तव वी.सी., दी एण्टीक्यूटी ऑफ द पाशुपत सेक्ट के.सी. चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम, पृ 111।
7. महाभारत (गीता संस्करण) शान्तिपर्व, पृ. 349–367।
8. भण्डारकर आर.जी., वही, पृ 116
9. पाठक वी.एस., वही, पृ 4–6
10. लोरेजन डेविड, वही, पृ 175
11. उदाहरणतया लकुलीश से सम्बन्धित अनेक अभिलेख उपलब्ध हुए है। चिन्ता–प्रशस्ति एकलिंगी जी अभिलेख, हेमावती अभिलेख आदि का उदाहरण दिया जा सकता है।
12. यादव, वी.एन., एस. सम एक्सपेक्ट ऑफ सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दन इण्डिया इन द टुवेल्फथ सेन्चुरी।
13. एपीग्राफिया इण्डिया, भीग 21 (1931–1932), पृ 1–9
14. राव टी. गणपति, एलीमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी, भाग–2, पार्ट–2. पृ 1961। चित्रवसधर कुर्याच्चित्र यज्ञोपवीतिनम। चित्र रूपं महेशानं चित्रैश्वर्यसमन्वितम। चतुर्बाहुं चैकववतुं सर्वालंकारभूशितम। खडगं धनु शरं खेटं श्रीकण्ठ विभ्रतं भुजेः।।
15. पाठक वी.सी.,वही, पृ. 4–5
16. शैव सिद्धांत सम्प्रदाय में श्रीकण्ठ को आठ विद्येश्वरों में से एक का संबोधन प्राप्त हुआ है। राव, वही, भाग–2, पार्ट 2, अपेण्डिक्स, पृ. 197 पूर्वकारण आगम, 14वाँ पटल, विश्णुधर्मोतर पुराण में भी इसे विद्येश्वरों में से एक स्वीकर किया गया है। दृष्टव्य राव, वही, पृ. 197
17. पाठक वी.एस., वही, पृ. 4–6
18. लोरेंजन डेविड, वही, पृ. 101
19. वही, पृ. 97–114
20. पाठक, वी.एस., वही, पृ. 4–7
21. तंत्रालोक 1/27 'क्लौ प्रवृते यातेशु दुर्गमगोचरम्। कलापिग्रामप्रमुखच्छिन्ने शिवशासने।। कैलासाद्रो भ्रमन्देवो मूर्त्या श्रीकण्ठरूप्या। अनुग्राहायवतार्णश्चोदयामास भूतले।।
22. शिवदृष्टि, वही, पृ. 22
23. वृहदयाम, – 7 ज्ञानौधेनसमाख्यातः पदवन्धजनेन तु। श्रीकण्ठस्य प्रसादेन सर्वोअयं परिणतो मम।। स्टडीज इन तंत्रास, पृ. 102 श्रीकण्ठे महान्प्रोक्तं मूत्वा सदाशिवपदात्। सरहस्यं महादेवि शृणश्वेकाग्रमानसा, वही, पृ. 103
24. पिंगलामत : अस्य तन्त्रस्य का सज्ञा, पिंगलामत संज्ञा...। क कर्ता भगवान श्रीकण्ठनाथ कर्ता। .....वही, पृ. 106
25. श्रीकण्ठं वसुमन्तं वसुगुप्तं सोमानन्दं तथोत्पलाचार्यम्। लक्ष्मणमभिनवगुप्तं वन्दे श्री क्षेमराजं च।। शारदातिलक, उद्धरित, जे.सी. चटर्जी, काश्मीर शैविज्म, पृ. 25 पाद टिप्पणी।
26. शिवपुराण, वायवीय संहिता, अध्याय 9/9 श्री कण्ठेन शिवेनोक्ता शिवायै च शिवागमाः। शिवाश्चितानां कारूण्यात् श्रेयसामेककारण्म्।।
27. तंत्रालोक (1), पृ. 28 'जयति गुरूरेक एव श्री श्रीकण्ठो भुवि प्रधितः। तदपरमूर्तिभगवान् महेश्वरो भूतिराजश्व ।।
28. रत्नत्रय, पृ. 1 सकलसंहितानाभवतारकत्वेन गुरू भगवन्तं श्रीकण्ठनाथं सर्वविधनापहं च गणपतिः अभिवन्दते।
29. वही, पृ. 67–114, पाठक वी.एस., वही, पृ. 5–6
30. शैवतयोस्य जगत्कृत्स्नं शक्तिमांस्तु महेश्वरः। इति मांगलशास्त्रे तु श्रीकण्ठो न्यरूपयत्।। उद्धरित तंत्रलोक, भाग 3, पृ. 3–47
31. उद्धरित, पाठक, वही, पृ. 5 पाद टिप्पणी, 10
32. तंत्रालो जयरथभाश्य, भाग 1, पृ. 39 एतच्च श्री श्रीकण्ठयाभिधानपूर्वकं विस्तरत उक्तम्।
33. श्रीपशुपतिभट्‌टारकस्य मूर्तिधरपरम पाशुपताचार्य श्रीकण्ठगुरूणां स्वात्महेतोः ज्ञानपुस्तकमितिशुभमस्तु। उद्धरित, पाठक, वही,पृ. 6
34. स्टडीज इन दी तंत्रास
35. पाठक, वी.एस., वही. पृ 6, टिप्पणी 1।
36. पाठक, वी., एस., वही. पृ. 6,
37. तंत्रालोक 12, पृ 367 तच्चपंचविशं प्रोक्त शक्तिवैचित्रयचित्रितम। पंचस्रोत इति प्रोक्तं श्रीमच्छ्रीकण्ठशासनम।।
38. इपीग्राफिया इण्डिका, भाग 1. पृ 284 श्रीकण्ठपंचमुखवासमधिश्ठितानि। येनाक्रियन्तकृतिनायतानि पंच।।
39. राव टी. गणपति, एलिमेण्टस ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी, भाग 2, पार्ट 2, परिशिष्ट, पृ 197
40. वही

41. इपीग्राफिया इंडिका, भाग 1. पृ 261 चित्रंयच्च सरस्वतीकृतरति श्रीकण्ठपूजापरः।
42. दी ऐज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ. 426–427
43. वही, पृ 391
44. भण्डारकर, आर,जी., वही, पृ. 30–35
45. पाठक, वी,एस., वही, पृ. 7
46. विस्तार के लिए द्रष्टव्य इस शोध–प्रबन्ध का अध्याय6
47. महाभारत (गीता संस्करण) शान्तिपर्व 349, 65, 66, 67
48. लकुलीश ऑफ कारवाण एण्ड हिल पाशुपत कल्चर, जर्नल आफ दी गुजरात रिसर्च सोसाइटी, भाग 17 (1955), पृ. 267 ।
49. पाटिल, डी.आर., कल्चरल हिस्ट्री फ्राम दी वायु पुराण, पृ. 61 ।
50. द्रष्टव्य पाठक, वी.एस., वही, पृ. 8. 29 आदि
51. वायुपुराण, 23/115